पिता, पुत्र और मैं

शीला कोलंबकार
अनु.- डॉ. चंद्रलेखा

शाम का समय............ रोज़ का नज़ारा....... रसोई में मेरा रोज़ का झमेला चल रहा था... घर के सब सदस्य सुबह ही काम पर चले जाते हैं सो शाम को वापस आते हैं। कम–से–कम शाम को उन्हें पूरा भोजन मिलना चाहिए, यही सोचकर हर शाम जब मेरे पति घर आते हैं तब सबसे पहले उन्हें चाय बनाकर देती हूँ, उनसे बातें करती हूँ..... और बाद में खाना पकाने रसोई में जाती हूँ। यही मेरा नियम भी बन चुका है आज भी वही हुआ.... मैंने खाना पकाना शुरू ही किया था कि दरवाज़े की घंटी बजी।

अब कौन आया होगा, यह सोचते हुए मैं दरवाज़ा खोलने गई। अपने काम में, मैं कितनी ही व्यस्त रहूँ... पर कोई भी आता है या फ़ोन बजता है तो पति महाशय तो अपनी जगह से हिलेंगे नहीं.... अख़बार जो पढ़ना होता है, अपना काम छोड़कर, रसोई के कमरे से भागकर..... मुझे ही दरवाज़ा खोलना पड़ता है या फिर फ़ोन भी सुनना पड़ता है। बाहर के काम से थककर जो घर आते हैं उनसे यह उम्मीद भी नहीं करनी चाहिए.... क्योंकि उनके विचार से मैं पूरा दिन घर में बिलकुल बेकार होती हूँ..... सो दरवाज़ा खोलने का काम मुझे ही करना चाहिए। आज भी दरवाज़ा मैंने ही खोला....

दरवाज़े पर इनके मित्र सदादादा खड़े थे.....

"आइए, दादा आइए... बैठिए....' मैंने उन्हें अंदर बुलाकर बिठाया, पानी पिलाया और उन्हें बताने के लिए मैं उनके कमरे में गई....

"कौन आया है? अगर कोई मुझ से मिलने आया है तो उसे कह दो कि मैं घर पर नहीं हूँ।" अख़बार पढ़ते हुए उन्होंने फ़रमाया......

"पर आपका दोस्त आया है.... और मैंने उन्हें बाहर के कमरे में बिठाकर कहा है कि आप घर में हैं।"

"तुम भी ना....अजीब हो.........मुझे आकर बताया क्यों नहीं?"

...अब दरवाज़े पर कोई खड़ा हो तो क्या करूँ? क्या उनसे मैं यह कहूँ, कि , अरे भाई, आप ज़रा यहीं पर रुकिए....मैं अंदर जाकर उनसे पूछती हूँ कि वे घर में हैं कि नहीं? फिर आकर आपको बताती हूँ....."

"पता नहीं तुम्हें कब अक्ल आएगी? अब बताओ भी कि कौन आया है?"

"सदादादा...."

"सदा आया है तो सीधे-सीधे बताओ ना........पहेली क्यों बुझा रही हो?"

वे जल्दी-जल्दी उठे......पैंट शर्ट पहनकर बाहर के कमरे में आए।

मैं अपनी रसोई की ओर मुड़ गई.....

'अरे सुनती हो?' चावल चढ़ाने के लिए बर्तन में पानी डालकर गैस पर चढ़ाया ही था कि उनकी आवाज़ सुनकर मैंने गैस बंद की और बाहर के कमरे की ओर मुड़ी....

'क्या हुआ?' कहते हुए मैं कमरे में पहुँची। मुझे देखते ही उन्होंने अपनी आँखों को बड़ा बनाकर इशारा किया.... बात यूँ थी कि रसोई में काम करते हुए मैंने अपनी साड़ी को चुन्नट के साथ ऊपर की ओर खोंसा था, नीचे की ओर से घाघरा दिख रहा था....

उनकी आँखों के इशारे को समझकर मैंने अपने बालों पर हाथ घुमाया और सहजता से अपनी साड़ी को नीचे की ओर किया। ये करते हुए मैं सोच रही थी कि बाद में मुझे डाँट पड़नेवाली है.....कहेंगे.....'बुलाया कि चली आई....गँवार की तरह.....साड़ी भी ठीक नहीं की....।'

'देखो, सदा पेड़े लेकर आया है। उसका बेटा डॉक्टर बन गया है, यही बताने के लिए वह यहाँ आया है।'

'सदादादा, सिर्फ पेड़े से ही काम नहीं चलेगा। आपको हमें बढ़िया पार्टी देनी होगी।' मैंने कहा।

'देंगे.....देंगे पार्टी भी देंगे। उसमें क्या है? पहले पेड़े तो लीजिए' मैंने पेड़े ले लिए।

'सदादादा क्या लाऊँ आपके लिए? चाय या कॉफी?'

'अरे तुम भी अजीब हो, चाय कॉफी के लिए क्यों पूछ रही हो? इतने दिनों बाद मेरा दोस्त हमारे घर आया है......, उसे खाना खिलाकर ही भेजेंगे।'

'नहीं नहीं, खाने के लिए फिर कभी आऊँगा....और भाभी मुझे चाय, कॉफी कुछ नहीं चाहिए। अगर घर में नींबू है तो मेरे लिए आप नींबू का शरबत ही बना दीजिए।'

'हो गया कल्याण। उस समय घर में नींबू नहीं थे। इतने में घंटी बजी। दरवाज़ा खोला तो मंदार खड़ा था। मंदार मेरा बेटा, ऑफिस से काम करके लौटा था। उसे वापस नीचे भेजने का सवाल ही नहीं उठता था। कौन सुनता फिर उसकी बड़बड़! मैं ही नीचे गई, नींबू ले आई, शरबत बनाया और उन दोनों को दिया।

'अभी तुम कहाँ गई थीं?'

'नीचे'—

'क्यों'

'यूँ ही'।

अगर मैं बताती कि नींबू लेने गई थी तो फिर मुझे डाँट पड़ती.... मुझ पर गुस्सा करने के लिए इतना कारण ही पर्याप्त था....और वह भी दूसरों के सामने।

सदादादा जाने के लिए खड़े हुए.....

'मैं सदा को बस स्टॉप तक छोड़कर आता हूँ।' पतिदेव उवाच। मेरे पास आकर उन्होंने रुपए मांगे। कल ही इन्होंने बैंक से रुपए निकालकर लाने के लिए कहा था, सो मैंने रुपए निकालकर उन्हें दिए।

'मैंने तुम्हें कितनी बार कहा है कि सौ—सौ के नोट मत लाओ। पर तुम हो कि अपनी मनमानी ही करती हो! दस दस के नोंट लातीं तो क्या

बिगड़ता? जानते हो सदा, हमारे घर में सब यही चलता है। कोई सुनता ही नहीं! जो काम बताया जाता है, उसे कोई करता ही नहीं..... देवीजी, बैंक में तो गई थीं ना?....दस–दस के नोट या पचास–पचास के नोट लातीं तो क्या बिगड़ता? बैंक में आपकी आवश्यकता के अनुरूप नोट मिलते ही हैं।'

आज बैंक में बहुत भीड़ थी। कैशियर ने जो नोट दिए मैं चुपचाप ले आई। पर यह सब उन्हें बताने का कोई फायदा ही नहीं था। मैं चुप रही।

कम–से–कम दूसरों के सामने तो अपना मुँह बंद रखते? मेरा चेहरा उतर गया।

मैं अंदर के कमरे में चली आई....पीछे–पीछे ये भी पहुँचे.....

.....अब सौ का छुट्टा मैं कहाँ से लाऊँगा? इसे तुड़वाने के लिए, अब मुझे ज़रूरत न होते हुए भी कुछ खरीदना पड़ेगा....

'पापा ये लीजिए छुट्टे रुपए.... मंदार ने अपनी जेब से रुपए निकालते हुए कहा।

'मुझे नहीं चाहिए'

'क्यों?'

'तुम्हारे रुपए मैं क्यों लूँगा?'

'पापा इस घर में मेरा–तुम्हारा कुछ नहीं है। ये रुपए आपके भी नहीं है और मेरे भी नहीं हैं। ये तो हम सब के हैं। हम सबका इस पर हक है। इसमें मेरा–आपका कहाँ से आया? जब से मैं कमाने लगा हूँ, मैंने तो कभी नहीं कहा कि ये रुपए मेरे हैं। मेरी कमाई के हैं। मुझे लगता है कि आपको ये रुपए ले लेने चाहिए।

इन्होंने चुपचाप रुपए ले लिए और अपने दोस्त को बस स्टॉप तक पहुंचाने निकल पड़े।

कितना समय बीत गया........इनका कोई अता पता ही नहीं। नौ बजे तक मैंने राह देखी। फिर मैंने मंदार से पूछा– 'बेटा, खाना लगाऊँ?'

'नहीं माँ, पापा को आ जाने दीजिए.....

बालकनी में जाकर मैं उनकी राह देखने लगी....।

'मम्मा आप वहाँ क्यों खड़ी हैं? यहाँ आइए, हम दोनों टी.वी. देखेंगे।'

'ना बेटा रहने दो।'

'मम्मा, पापा कुछ बोलकर आप पर गुस्सा कर रहे थे, इसलिए आपको बुरा लगा?'

'इसमें नया क्या है? ये तो रोज़ का झमेला है बेटा।'

मम्मा, पापा जो गुस्सा आप पर कर रहे थे ना, असल में वह गुस्सा आप पर नहीं था। असल में वह गुस्सा मुझ पर था। पर अब मैं बड़ा हो गया हूँ....नौकरी करने लगा हूँ, कमा रहा हूँ.........तो पापा मुझे कुछ कह नहीं सकते........इसीलिए मेरा गुस्सा उन्होंने आप पर उतारा।'

'पापा का गुस्सा और वह भी तुम पर?'

'अरे माँ, मैं जब बारहवीं में पास हुआ तब पापा को लगता था कि उनका बेटा भी साइंस में जाएगा....डॉक्टर बनेगा...........पर मैं डॉक्टर नहीं बना। पापा को मुझ पर गुस्सा आया। इसमें पापा का दोष नहीं। हर पिता को लगता है कि उनका बेटा डॉक्टर या इंजीनियर बने, पर हरेक के लिए यह संभव नहीं होता, यह बात पापा के ध्यान में नहीं आई। माँ, आप खामख्वाह परेशान न हों, पापा की बात का बुरा नहीं मानना।'

मैं मंदार को आश्चर्यचकित होकर देखने लगी.......

ये मंदार.........अब बड़ा हो गया है, कल तक यह मात्र बित्ते भर का था. ...आज वाकई सयाना हो गया है। अभी तक इसका बचपना नहीं गया, फिर भी कितनी समझदारी की बातें करता है! छोटे बच्चे की समझ में जो बात आई, वह मेरी समझ में क्यों नहीं आई?

.......मैं यादों में खो गई.......मेरे सामने स्कूल में पढ़ने वाला मंदार खड़ा था........ये जब गोवा जाते थे तब मंदार को हिदायत देकर जाते थे। 'बाबू! मैं दो दिन बाहर रहूँगा। घर का ध्यान रखना....सोते समय दरवाज़े खिड़की ठीक से बंद करना। मंदार पापा की हिदायतों को ध्यान में रखते हुए, रात को स्टूल पर चढ़कर सब दरवाज़े खिड़की को जाँचता था। दूसरे दिन स्कूल में जाते समय मुझसे कहता–

'माँ, दरवाज़े को अंदर से ठीक से बंद करना। अगर किसी ने घंटी बजाई तो पहले पूछना कौन है? फिर चेन लगाकर दरवाज़ा खोलना, कोई पहचान वाला हो तभी पूरा दरवाज़ा खोलना।'

स्कूल के बाद कॉलेज में पढ़ता हुआ मंदार..........

अगर मुझे कहीं बाहर जाना होता तो वह मेरे साथ आता था। लोकल ट्रेन में जाते समय वह मुझसे कहता, 'वहाँ इंडिकेटर के नीचे खड़ी रहना, मैं टिकट लेकर आता हूँ।' मंदार जब छोटा था, तब मेरे पति मुझसे कहते थे– 'तुम बेटे को लेकर इंडिकेटर के नीचे खड़ी रहना, मैं टिकट लेकर आता हूँ।'

कॉलेज में पढ़नेवाला मंदार हमेशा मेरा पक्ष लेकर बोलता था। अपने पिताजी का पक्ष उसने कभी नहीं लिया। एक बार मंदार ने मुझसे कहा, 'मम्मा आपको चाहिए था कि आप अपने लिए एक अच्छा–सा जीवन साथी चुनतीं। आपने पापा को कैसे चुना? कैसी जिंदगी जी रही हैं आप? इतनी पढ़ी लिखी. ....सुसंस्कृत........फिर भी........आपके पास अपना ऐसा क्या है? आप अपने लिए कुछ नहीं करतीं........पूरा दिन घर में बैठी रहती हैं...........ऊपर से पापा की डाँट खाती हैं........आप चुप क्यों रहती हैं.....पलटकर जवाब क्यों नहीं देतीं? अगर आप लव–मैरेज करतीं तो ज़्यादा सुखी होतीं..'

मुझे हँसी आई.......मुझे हँसता देख उसे गुस्सा आया....

'मम्मा आप हँस क्यों रही हैं?'

'हँसूं नहीं तो और क्या करूँ? अगर मैं लव–मैरेज करती तब भी ऐसे ही होता। अंततः तो भारतीय पुरुष.....जैसे ही पति बनता है, सब कुछ भूल जाता है.....अगर उसे कुछ याद भी रहता है तो बस उसकी जिम्मेवारी। अपने परिवार को सुखी देखने के स्वप्न वह देखता है.........उसी में उलझ जाता है..........उन्हीं सपनों के नशे में वह झूमता है। उसी नशे में वह अपनी पत्नी के साथ बराबरी की दोस्ती का संबंध भूल जाता है। उसके अंदर एक ही भावना अधिक होती है कि मैं इस घर का कर्ता धर्ता हूँ।'

'इसके माने क्या हुआ?'

'कर्ता धर्ता मतलब, हेड ऑफ द फैमिली। उस समय हम कुछ भी कहें, पलटकर जवाब दें....तब भी फ़ायदा कुछ नहीं होगा। अगर कुछ होगा भी तो इतना ही कि उन्हें लगेगा कि हम उनके कामों में अडंगा अड़ा रहे हैं. ....इसीलिए मैं चुप ही रहती हूँ.......अंततः पापा जो कष्ट उठा रहे हैं, वह हमारे ही लिए हैं ना?

'मम्मा आप भी.........आपको कितना भी समझाएँ आप हमेशा पापा का ही पक्ष लेती रहती हैं....दूसरी औरतों को देखें तब पता चले.........पर आपको तो यह सब बताने का कोई फ़ायदा ही नहीं। पर एक बात है मम्मा कि पापा भी फैक्टरी में कामगारों के साथ काम करते रहते हैं तो उनकी मनोवृत्ति भी उनके जैसी ही हो गई है। फिर भी पापा का नसीब अच्छा है कि उन्हें आप जैसी समझदार पत्नी मिली है वरना.........

मंदार ने कॉलेज की डिग्री ली। अब वह नौकरी करने लगा है। नौकरी करने वाला मंदार बिलकुल बदल गया है। अभी तक तो उसे अपनी पहली पगार भी नहीं मिली, और उसकी माँगें शुरू.........जैसे ही शाम को वह घर आए, तब मुझे जाकर उसे पानी देना चाहिए...वह किसी भी समय घर आए, मुझे उसकी राह देखकर घर पर ही रहना चाहिए..........अगर मैं कहीं जाऊँ तो उसे गुस्सा आता है....उसके बैग से खाने का डिब्बा मुझे ही निकालना चाहिए.........वह काम मेरा है, उसका नहीं। शाम के समय जब वह आता है तब मुझे उसके आगे–पीछे रहना चाहिए....वह ऑफिस की बातें सुनाता है, वह मुझे सुननी चाहिए...शाम को अगर मेरी सहेली का फ़ोन आता है तो वह नाराज़ हो जाता है....मेरा टी.वी. देखना भी उसे पसंद नहीं है। उसे सुबह ऑफिस जाने के लिए मुझे ही जाकर जगाना चाहिए। मैं अगर टी.वी. देखती रहूँ और उसकी तरफ ध्यान न दूँ तो भी वह नाराज़ होता है। सुबह गीज़र चालू करके मंदार के लिए गरम पानी निकालकर रखने का काम भी मेरा है। नहाने के बाद उसकी चाय और नाश्ता उसके पास जाकर रखूँ तभी वह खाता है। उसके लिये रूमाल भी निकालकर रखना पड़ता है। ऑफिस में जाते समय वह ढ़ेर सारी शर्ट्स निकालता है, उन्हें खोलकर रख देता है........जो मैच होगा, उसी को पहनकर वह जाता है। उसके पसरे हुए शर्ट्स, उसकी तह लगाने का काम मुझे ही करना चाहिए.....उन्हें अलमारी में रखने का ज़िम्मा भी मेरा है।

एक दिन की बात है....शाम के समय मेरी सहेली का फ़ोन आया था। मेरी सहेली भी ऐसी है कि जब भी फ़ोन करेगी, कम–से–कम आधा घंटा तो ज़रूर बातें करेगी। ठीक उसी समय मंदार आया–

'किसका फ़ोन है?' उसने इशारे से पूछा, 'तुम्हारी उस सहेली का?'

मैंने हाँ की मुद्रा में सिर हिलाया। वह दूसरे कमरे में गया और वहीं से ही चिल्लाया.... 'माँ बहुत भूख लगी है, खाना परोसो।'

'कौन चिल्ला रहा है?' मेरी सहेली ने पूछा।

'मंदार.......और कौन?

'क्या हुआ उसे?'

'कुछ नहीं, भूख लगी है।'

'तो तुम उसे देखो, मैं बाद मैं फ़ोन करती हूँ।'

मैंने जल्दी–जल्दी खाना मेज़ पर रखा। सोचा, रोज तो ऑफिस से आकर वह नहाता है, बाद में खाता है.....आज वाकई उसे ज़ोरों की भूख लगी होगी तभी नहाए बगैर खाना माँग रहा है। इतने में मंदार की आवाज़ आई–

'माँ मेरे लिए खाना मत परोसना....

'क्यों? तुम तो कह रहे थे कि तुम्हें बहुत भूख लगी है?'

'पापा को आने दो ना....

'तो फिर भूख–भूख क्यों चिल्ला रहे थे?'

'मम्मा आप तो जानती ही हैं ना कि शाम को जब मैं घर आता हूँ तब आप फ़ोन पर बात करती रहें....यह मुझे अच्छा नहीं लगता।'

ऐसे ही एक दिन मैं अपनी बहन के साथ फ़ोन पर बात कर रही थी कि वह मेरे पास आया, और बोला, 'माँ आपका मनपसंद सीरियल शुरू हो गया है'– वह इस तरह बोला था कि माउथपीस में दूसरी ओर उसकी आवाज़ सुनाई दे।

मेरी बहन ने पूछा, 'कौन है?'

'मंदार और कौन?'

'तुम्हारा बेटा तुम्हें बहुत चाहता है।'

मैं हँसी। मेरी बहन ने कहा, 'मैं तुम्हें कल फ़ोन करती हूँ।' उसने फ़ोन काट दिया। मैं मंदार की तरफ मुड़ी और मैंने कहा–'क्या मंदार....ये क्या तरीका हुआ? मेरी बहन..... तुम भी ना मंदार....

'कुछ नहीं माँ, मेरे पास बैठो और यह प्रोग्राम देखो!'

'बहुत हो गया मंदार....तुम समझते क्या हो अपने आपको? मैं क्या तुम्हारी गुलाम या नौकर हूँ जो तुम्हारे इशारे पर नाचती रहूँगी? तुम्हारा इस तरह का हुक्म चलाना मुझे नहीं अच्छा लगता। अगली बार अगर तुमने इस तरह की हरकत की तो देख लेना.....मुझ से बुरा कोई न होगा........! इस तरफ बाप तो उस तरफ बेटा.... पता नहीं क्या समझते हो अपने आपको?'

दूसरे दिन सुबह, मेरा रोज़ का काम चल रहा था....कल छुट्टे रुपयों का पुराण चला था जो आज तक ख़त्म नहीं हुआ था। अब उन्होंने आज नया राग अलापना शुरू किया...आज साड़ी पुराण.......कल जब तुम रसोई के कमरे से बाहर आईं तब तुमने साड़ी की चुन्नट क्यों खोंस रखी थी? बिलकुल तमीज ही नहीं है तुम्हें? क्या बाहर के कमरे में आने से पहले तुम अपने आपको ठीक नहीं कर सकती थीं? चली आईं गंवार की तरह......... .और तुमने संदा को क्यों पूछा कि चाय पियोगे या नहीं? इस तरह पूछोगी तो कोई भी मना ही कर देगा।

'पर सदादादा ने तो दोनों में से कुछ न लेकर शरबत के लिए कहा था.....

'मेरे दोस्त सदा की तो बात ही कुछ और है! अगर मैं उसकी जगह होता तो मना ही कर देता।'

मैंने सोचा कल का गुस्सा अभी उतरा नहीं है। सुबह ही सुबह शुरू हो गए! मैं चुप ही रही। उन्होंने नाश्ता किया, चाय नहीं पी। मैंने सोचा, शायद भूल गए हैं। मैंने याद दिलाया 'अरे आपने चाय नहीं पी.......?'

इतना कहना भर था कि वे चिल्लाए......

'बस यही तुम्हारी आदतें, आपने चाय नहीं पी? आज आपको जाना नहीं? खाना खाया कि नहीं? ये नहीं किया? हमेशा तुम्हारे मुँह में नहीं का नकार ही रहता है। हर बार नहीं, नहीं करते रहने से सबकुछ नहीं में ही परिवर्तित होता जाता है....तुम हो ही नकारात्मक।'

'अरे इसमें नहीं या नकार का सवाल ही नहीं, ये तो बस बोलने का तरीका है.... ।'

'अब देखो, तुम मुझे तरीके न सिखाओ। चार पुस्तकें क्या पढ़ लीं सिर पर चढ़ती हैं। बहुत अक्लमंद समझती हैं अपने आपको! चली हैं मुझे तरीका सिखाने। जानती हो ना मेरी मातृभाषा कोंकणी ही है। मुझे किस तरह बोलना चाहिए, यह भी क्या तुम से सीखना पड़ेगा।

हम दोनों ही अगर एक साथ बोलने लगे तो सुबह–सुबह ही बात और बढ़ जाएगी........यही सोचकर मैं चुप रही। इन्होंने गुस्से में ही चीजों को इधर–उधर पटका....दरवाज़ा खोला.....धड़ाम से बंद किया। जाते समय 'मैं जा रहा हूँ' भी नहीं कहा और चलते बने। मुझे बाय–बाय नहीं किया। खिड़की के परदे की आड़ से उन्हें जाते हुए देखा...वे भी बहुत आगे तक निकल गए, बाद में उन्होंने पीछे मुड़कर देखा....बालकनी में मुझे न देखकर वे परेशान दिखे....फिर मुड़कर अच्छी तरह देखा..और बाद में वे आगे निकल गए। मुझे भी हँसी आई।

अंदर आकर मैंने मंदार से कहा–'तुम्हारे पापा अभी बाहर काम पर जा रहे थे इसलिए मैं चुप रही। आने दो उन्हें शाम को, फिर दिखाती हूँ! जितना मैं चुप रहती हूँ उतना ही वे मेरे सिर पर चढ़ते जा रहे हैं.....बहुत हो गया......अब मैं भी नहीं सुनने वाली.....आज शाम को आने दो उन्हें..... .मैं भी मज़ा चखाती हूँ।'

मंदार चुप!

'और तुम अभी घर पर ही हो? आज काम पर नहीं जाना?'

'आप बाहर गई थीं, तब मैंने फ़ोन पर बता दिया था कि आज थोड़ी देरी से पहुँचूंगा'

'क्यों, क्या हुआ? क्या तबीयत ठीक नहीं है?'

'नहीं, नहीं, ऐसा कुछ भी नहीं है। कल, मैं जब घर आया तब पापा ने झगड़ा किया और मेरा मूड ऑफ हो गया।'

'पर हुआ क्या?' मेरे शब्दों से चिंता झलक रही थी।

'कुछ नहीं माँ। ये लो' कहते हुए, उसने मेरे हाथ में एक पैकेट दिया, और मेरे पैर छुए।

'अरे, क्या है इसमें?'

'खोलकर देखिए....

मैंने देखा, पैकेट में उसकी पहली पगार का चैक था। साथ ही साथ उसमें एक और चैक था जिस पर उसने अपनी स्वाक्षरी कर दी थी। पर उसमें रकम नहीं भरी थी।

'अरे मंदार, यह कैसा चैक है?'

'यह ब्लैंक चैक है। मैंने अपने स्वाक्षर कर दिए हैं। जितने चाहिए उतने रुपए निकालना, और जहाँ चाहिए वहाँ खर्च करना....।

'अरे, पर यही चैक अगर तुम कल ही पापा को देते तो पापा कितने खुश होते? अब पापा को दुख होगा।'

'पहली चीज़ ईश्वर को देते हैं ना इसलिए। मुझे आपमें ही ईश्वर दिखते हैं, सो मेरी पहली कमाई का चैक भी आप ही के लिए। दूसरा पापा को दूंगा।'

'नहीं बेटा, ऐसा नहीं कहते।' शाम को आकर यही चैक तुम पापा को देना। तुम से चैक लेते हुए वे बहुत खुश होंगे.....तुम्हें चैक भी वापस करेंगे, फिर तुम मुझे देना।'

'बस यही तो समझ में नहीं आता। इतनी रामायण हो जाने के बाद भी आपको पापा पर गुस्सा नहीं आता! इसीलिए तो मैं आपको मानता हूँ। पहले मैं सोचता था कि पापा गुस्सा होते हैं तो आप चुप क्यों रहती हैं? पर अब समझ में आता है कि आप जो कर रही हैं, सही कर रही हैं। मम्मा, आप क्या हैं, यह शायद आपको भी पता नहीं है। आप, अर्थात् सहनशक्ति की चरम सीमा हैं। कितना सहती हैं आप! मुझे तो आश्चर्य होता है मम्मा कि आप कितना कुछ सह लेती हैं! आपको मालूम नहीं है, पर आप हमारी शक्ति हैं। आप तो पूरे परिवार को बांधनेवाला सेतु हैं! हमारा ऑक्सिजन हैं। ऑफिस में काम करते हुए भी, आप घर पर मेरी राह देख रही हैं। यह सोचकर ही काम करने की ऊर्जा मिलती है। आप राह देखेंगी। यह सोचकर ही शाम होते–होते घर आने को जी करता है। आप जब घर में होती हैं ना मम्मा, तब घर भरा–भरा लगता है। पर आप एक रात के लिए भी कहीं बाहर जाती हैं तो पूरा घर खाने को दौड़ता है। सब खाली–खाली दिखता है। कभी–कभी

अधिक काम की वजह से ऑफिस में रुकना पड़ता है तब शाम के समय आप बालकनी में खड़ी राह देखती होंगी....यह नज़ारा आँखों के सामने उभर आता है। मैं जब घर आऊँ और आप न दिखाई दें तो मेरी जान फ़ड़फ़ड़ाने लगती है। आप पर गुस्सा आता है.....घर आते ही आपको सोया हुआ देखूं तो मेरी भूख प्यास ग़ायब हो जाती है....। मैं यह भी जानता हूँ कि आप कितनी ही बीमार क्यों न हों, हमारे आने के समय आप उठ जाती हैं...अपने दुख के बारे में आप कभी पता ही नहीं लगने देतीं। यह सब ताकत कहाँ से आती है मम्मा?'

'अगर मैं यह सब आपके बारे में महसूस करता हूँ तो पापा को कैसा लगता होगा? वे तो बोलकर भी नहीं दिखाते? पर, आप जब नहीं होती हैं ना तब पापा बिलकुल बेचारे से हो जाते हैं........उन्हें भी तो बाहर के कामों में तकलीफ होती होगी.....कितने अपमान........कितनी निराशा.....कितना गुस्सा. .... उन्हें भी आता होगा ना मम्मा। अपमान.......निराशा.........गुस्सा......... इन्हें भी तो कहीं निर्गम द्वार चाहिए ना माँ। पुरुष बाहर के लोगों पर तो गुस्सा नहीं कर सकता ना..........उन पर उसका हक भी तो नहीं ना.......... अपनी सब निराशा............अपमान............गुस्सा निकालने के लिए पापा को आपकी ही ज़रूरत पड़ती है। आश्चर्य की बात तो यह है कि आपने भी इन बातों को इतनी सहजता से समझ लिया है कि क्या कहना? इन सबके लिए बहुत बड़ा दिल चाहिए मम्मा..... जो आपके पास है। आप सही कहती हैं कि जीवन दो और दो चार जितना आसान और सरल नहीं है। जीवन में तो दो और दो तीन हो सकते हैं.........पाँच भी हो सकते हैं...........चार तो अधिकतर होते ही नहीं। अब देखिए ना मम्मा, कल ही हमारे ऑफिस में एक नई लड़की को नियुक्त किया गया है। उसे काम कतई नहीं आता। वह डायरेक्टर की संबंधी है। वह गलतियाँ करती है। मैनेजर उसे तो कुछ नहीं कह सकता..........तो फिर गुस्सा हममें से किसी एक पर उतारता है। अपमान होता है, ये स्पष्टतः दिखता है, पर कुछ नहीं कर सकते.......कभी कभी तो सोचता हूँ कि लात मार देनी चाहिए ऐसी नौकरी को। पर मजबूरी है कि ऐसा कर नहीं सकता और नौकरी मिलना इतना आसान भी तो नहीं।

कभी–कभी लगता है, पापा ने भी बहुत कुछ सहा होगा..........हम सब की ज़िम्मेदारी उन्हीं पर थी ना? कभी–कभी तो हमसे काम पूरा लिया जाता है पर प्रमोशन किसी और का ही होता है। क्रेडिट तो कोई तीसरा ले जाता है..........बाहर के जीवन में आपकी क्षमता कोई नहीं देखता......... शिक्षित होने से भी कोई फ़ायदा नहीं होता.........आपके अच्छे व्यवहार से भी कुछ हासिल नहीं होता। यहाँ पर एक ही चीज अच्छी होनी चाहिए, आपका नसीब। अगर आपका नसीब अच्छा है तो सबकुछ अच्छा हो जाता है। अगर नसीब अच्छा नहीं है तो सबकुछ अच्छा होते हुए भी कुछ नहीं होता। ऐसे इस माहौल में, मम्मा आप तो सतत रूप से झरना हो शीतल झरना.....

मैं हैरान, यह मेरा मंदार क्या–क्या बोल रहा है? फिर मैंने कहा, 'अच्छा–अच्छा ठीक है। चल मुझे चने के झाड़ पर मत चढ़ा। तुम्हें देरी हो रही है....चलो निकलो.... सात पैंतीस की तुम्हारी लोकल छूट जाएगी....... चलो.......चलो......'

'देखा, मैं अपने मनोभाव व्यक्त कर रहा हूँ.......आपकी प्रशंसा कर रहा हूँ..........पर आप तो मेरी बातों को टालने के बहाने, मुझे ही भगा रही हो! कितनी सहज हो आप?'

मैं मंदार के चेहरे को देखने लगी.........यह बित्ते भर का लड़का आज मुझे बड़ी–बड़ी बातें बात रहा है..... मेरी तारीफ़ कर रहा है.....क्यों कर रहा है वह यह सब? मेरा मज़ाक तो नहीं उड़ा रहा? पर नहीं, लगता है कि वह अपने दिल की बात बता रहा है.........

'मम्मा आप तो वृक्ष की जड़ों की तरह हो, खुद तो प्रच्छन्न रूप में रहकर हमें ममता की छाँह मे पालती हो....

'अब तुम ऑफिस जाते हो या तुम्हारे सिर पर मैं कुछ फोड़ूं...?'

'जा रहा हूँ.........मम्मा जा रहा हूँ.....एक बात और मम्मा.......उस समय जो फ़ोन आया था, वह आपकी सहेली का था..........

'फिर तुमने मुझे फ़ोन दिया क्यों नहीं? क्यों कहा कि रॉंग नंबर है?'

'मैं जब घर से बाहर निकलूं, तो मुझे चाहिए कि आप मेरे साथ दरवाज़े

तक आएँ.......मुझे बाय–बाय करें.........और दरवाज़े को बंद करते हुए आप हँसें. .....आपकी हँसी की बदौलत मेरा दिन हँसते हुए बीतता है.........फ़ोन पर बोलते हुए आप मेरी तरफ ध्यान नहीं देतीं......... यह बात मुझसे सही नहीं जाती। आपकी सहेली जो आधे–आधे घंटे तक आपसे बतियाती रहती है........तो मैंने उससे कह दिया कि आप किसी काम से नीचे गई हैं.......अब मैं जाऊँ, बाद में आप अपनी सहेली को फ़ोन करना.... बतियाना.....मैं चला.'

'बहुत बोलने लगा है तू.......ठहर तो मैं.........

मैं आगे जो बोलने जा रही थी उसे सुनने के लिए वह वहाँ रुका ही नहीं था। वह तो लंबे–लंबे डग भरता भाग खड़ा हुआ था.......मैं सोचती ही रही कि वह क्या–क्या बोल गया........? इतने में दरवाज़े की घंटी बजी। दरवाज़ा खोला तो देखा, दरवाज़े पर फिर मंदार खड़ा था–

'अब क्या भूल गए? क्या कोई और डायलॉग याद आया? कुछ भूल गए......?'

'हाँ, एक बात बताना भूल गया...

'क्या?'

'आप कह रही थीं ना, आज शाम को, पापा जब घर आएंगे तब आप उनकी ख़बर लेनेवाली हैं?'

'तो...

'आज शाम को जब पापा घर आएंगे तब आप पापा से कुछ नहीं कहना.......मम्मा प्लीज़..........पापा को कुछ न कहना.........!!'

